राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण : एक अध्ययन

कमल किशोर*

राजनीतिक समाजीकरण को राजनीतिकरण, राजनीतिक सहभागिता या राजनीतिक भर्ती या फिर समाजीकरण का ही पर्याय मान लेने की भ्रांति विद्यमान है। आम बोलचाल की भाषा में इन संकल्पनाओं का उलट–फेर कर प्रयोग तक किया जाता है। कुछ विद्वानों ने तो राजनीतिक समाजीकरण के संकल्पनात्मक अर्थ में इसे राजनीतिक संस्कृति के सदृश धारणा मान लेने की भूल तक की है। इसलिए हम पहले राजनीतिक समाजीकरण की इन संकल्पनाओं से समानता व भिन्नता का विवेचन करेंगे और फिर इसकी प्रकृति के संबंध में सामान्य निष्कर्ष निकालेंगे।

राजनीतिकरण का सीमित अर्थ लिया जाता है। यह महज राजनीति में व्यक्ति की रूचि का संकेतक है। इससे वह राजनीति में दीक्षित नहीं होता है बल्कि उसका राजनीति तर तरफ रुझान व झुकाव हो जाता है। अतः व्यक्ति का राजनीति की ओर आकर्षण व रूचि ही राजनीतिकरण है। राजनीतिक सहभागिता राजनीतिक क्रिया को कहा जाता है। इससे व्यक्ति राजनीति में एक तरह से प्रवेश ले लेता है और इस प्रकार के प्रवेश का आधार व्यक्ति की राजनीतिक क्रिया होती है। राजनीतिक भर्ती में व्यक्ति राजनीति का एक भाग बन जाता है। वह राजनीति का तमाशबीन नहीं रहकर उसमें दीक्षित हो जाता है। यह व्यक्ति का राजनीति में आत्मसात होना है। इस प्रकार, राजनीतिक समाजीकरण, राजनीतिकरण, राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक भर्ती से भिन्न है। वास्तव में राजनीतिक समाजीकरण इन सबका प्रेरक आधार है और इसके अभाव में यह तीनों ही सम्भव नहीं होते।[1]

उपरोक्त विवेचन से राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति का स्पष्टीकरण हुआ है। यह व्यक्ति का राजनीतिकरण, उसकी राजनीतिक सहभागिता और राजनीकि भर्ती से कहीं अधिक व्यापक संकल्पना है। इसमें व्यक्ति की राजनीतिक अभिवृत्तियों, राजनीति संबंधी उसके विश्वासों व मान्यताओं का निर्माण और इनके आधार पर उसका राजनीतिक अभिमुखीकरण सम्मिलित रहता है। यह वह प्रक्रिया है जिससे यह मूल्य, मान्यताएँ, आस्थाएँ और विचार न केवल बनते हैं वरन् एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तांतरित होते हैं। इस कारण ही राजनीतिक समाजीकरण राष्ट्र के प्रति निष्ठा तथा विशिष्ट मूल्यों को पनपाने में सहायता देता है। यह राजनीतिक व्यवस्था के लिए समर्थन जुटाता है या उससे दुराव में वृद्धि कर सकता है।

आमण्ड और कोलमेल ने राजनीतिक समाजीकरण के प्रकारों की बात की है। उनके अनुसार राजनीति समाजीकरण के दो रूप होते हैं। यह प्रकट और अप्रकट दोनों ही प्रकार का हो सकता है। जब राजनीतिक व्यवस्था संबंधी जानकारी, अभिमुखीकरण और मूल्यों का स्पष्ट रूप से जानबूझकर सम्प्रेषण या संचरण होता है तो यह राजनीतिक समाजीकरण का प्रकट रूप होता है। जब समाजीय राजनीति के संदर्भ में राजनीति संबंधों के बारे में मनोवृत्तियाँ बनती या बनाई जाती है तो यह प्रकट राजनीतिक समाजीकरण है।

राजनीतिक समाजीकरण का प्रकट रूप बहुत महत्वपूर्ण है। इसमें छल–योजना, जोड़–तोड़ द्वारा लोगों में राजनीतिक व्यवस्था के संबंध में 'ऐसी या वैसी' मान्यताएँ, मूल्य और विचार पनपाये जाते हैं। ऐसा राजनीतिक समाजीकरण, साम्यवादी देशों या तानाशाही व्यवस्थाओं में ही होता हो ऐसी बात नहीं है। लोकतंत्रों में भी इसका सहारा लिया जा सकता है। यह कई तरह से सम्भव बनाया जाता है। स्कूलों में विशेष प्रकार के पाठ्यक्रम से लेकर (विशेषकर नागरिक शास्त्र व इतिहास का पाठ्यक्रम) अन्य समूह व्यवस्थाओं द्वारा भी इसको खुल्लमखुल्ला प्रेरित किया जा सकता है।[2]

राजनीतिक समाजीकरण का अप्रकट रूप सरकार के प्रभाव क्षेत्र के बाहर की समाजीकरण प्रक्रियाओं के साथ–साथ ही चलता है। यह स्वतः होने वाली प्रक्रिया है। इसमें राजनीति संबंधी मान्यताएँ, मूल्य और विचार बनाये नहीं जाते हैं वरन् व्यक्ति के समाजीकरण की बृहत्तर प्रक्रिया के साथ स्वतः ही ऐसे विचार बन जाते हैं। इस रूप में राजनीतिक समाजीकरण जीवन भर चलने वाली प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति का उपरोक्त विवेचन, जिसमें इसके प्रकट और अप्रकट दो रूप उभरे हैं, यह स्पष्ट करता है कि राजनीतिक समाजीकरण के कई अभिकरण होते हैं। इन अभिकरणों के माध्यम से राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया स्वतः चलती रहती है या इच्छित दिशा में छल–योजित की जाती है।[3]

राजनीतिक समाजीकरण के कई अभिकरण (एजेन्सियाँ) होते हैं। इनमें विशेष ध्यान देने की बात यह है कि इन अभिकरणों का राजनीतिक समाजीकरण में एक–सा योगदान या एक समान महत्व नहीं होता। किसी अभिकरण की भूमिका आधारभूत सकती है जबकि अन्य की भूमिका सरसरी ही रह सकती है। इसी तरह, इन अभिकरणों की भूमिका व्यक्ति की उम्र से साथ घनिष्ठ रूप से जुड़ी होती है। एक अभिकरण व्यक्ति की एक उम्र में उसके राजनीतिक समाजीकरण में महत्वपूर्ण

***शोध छात्र, राजनीति विज्ञान,बी.आर.ए. बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर।**

योगदान देता है तो दूसरा इसकी उम्र के दूसरे भाग में। उदाहरण के लिए परिवार का एक उम्र विशेष में बहुत योगदान रहता है। इसी तरह, स्कूल भी ऐसा ही अभिकरण है जो उम्र के साथ अपने प्रभाव में हेर–फेर वाला बन जाता है। यहाँ इस बात को भी नोट करना है कि राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण उसके प्रकट और अप्रकट रूप से काफी कुछ जुड़े होते हैं। अर्थात् राजनीतिक समाजीकरण के उद्देश्यों से भी इसके अभिकरण जुड़े रहते हैं। राजनीतिक संस्कृति में ही परिवर्तन लाने हों तो राजनीतिक समाजीकरण की जोड़–तोड़ की जाती है। इसके लिए अभिकरणों में भी हेर–फेर करना होता है। अतः राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों के संबंध में यह बात विशेष रूप से ध्यान देने की है कि इनकी सुनिश्चित सूची नही बन सकती है। यहाँ हम कुछ महत्वपूर्ण अभिकरणों का ही उल्लेख कर रहे हैं[4] :

(क) परिवार
(ख) स्कूल या शिक्षण संस्थाएँ
(ग) स्वैच्छिक समूह
(घ) जन–सम्पर्क माध्यम
(ङ) सरकार
(च) राजनीतिक दल और दल संरचनाएँ

(क) राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में परिवार का प्रभाव अपने आप ही स्पष्ट दिखाई देता है। परिवार वह पहली खिड़की है जिससे बालक बाहर की दुनिया को देखता है और इसी में बालक पहली बार माता–पिता की सत्ता के सम्पर्क में आता है। परिवार में ही बालक को प्रथम बार इसका बोध होता है कि स्त्री–पुरुषों की निर्वाह की जाने वाली भूमिकाओं में क्या अन्तर है? यह व्यक्ति के जीवन में सर्वाधिक महत्व का समाजीकरण अभिकरण है। यह व्यक्ति के जीवन का वह पहला समूह है जिसके अभिन्न अंग के रूप में उसका विकास होता है। यहीं से व्यक्ति की सीख शुरु होती है। मनोवैज्ञानिक दृष्टि से यह सीखने का अनुकूल काल भी होता है। यह उम्र ही ऐसी होती है जब बालक को सब तरफ से सीख के रूप में बहुत कुछ ग्रहण करना और जानना ही होता है। अतः परिवार समाजीकरण और राजनीतिक समाजीकरण का आधारभूत अभिकरण है।

परिवार की राजनीतिक समाजीकरण में भूमिका हर समाज में, हर परिवार और हर बालक के संदर्भ में एक–सी नहीं रहती है। यह स्वयं परिवार की प्रकृति, उसके सदस्यों की राजनीति समाजीकरण और उनकी राजनीतिक संस्कृति

संबंधी मान्यताओं से बहुत कुछ नियमित होती है।

(ख) स्कूल और अन्य शिक्षण संस्थाओं का राजनीतिक समाजीकरण में योगदान निर्णायक होता है। परिवार से बालक का पहला औपचारिक कदम स्कूल की तरफ ही जाता है। शिक्षा व्यक्ति को राजनीतिक व्यक्ति बनाने का सबसे महत्वपूर्ण अभिकरण है। औपचारिक दृष्टि से शिक्षित व्यक्ति में राजनीतिक बातों के प्रति रुचि, उनके संबंध में उसकी जानकारी और राजनीतिक प्रभावोत्पादकता सर्वाधिक होती है। शिक्षा व्यक्ति को राजनीतिक समझ प्राप्त करने और राजनीतिक भूमिका निभाने के लिए तैयार ही नहीं करता वरन् उसमें राजनीतिक दायित्वों की भावना भी विकसित करती है। यह व्यक्ति के जीवन में राजनीतिक खेल खेलने का लम्बा चौड़ा मैदान दिखा देती है। यह व्यक्ति को राजनीति की ओर उन्मुखी और लालायित करना है।

(ग) राजनीतिक समाजीकरण में घरों और स्कूलों के साथ–साथ प्राथमिक और सहायक समूहों की भूमिका भी चलती रहती है। हम–उम्र, एक से ही स्टेट्स वाले, हमजोली या 'लंगोटिये समूह' ऐसे स्वेच्छिक समूह हैं जिनमें बालक परिवार और स्कूल के अलावा अपना समय व्यतीत करना पसंद करता है। यह अनौपचारिक होते हैं और 'मित्रमण्डली' के रूप मे सर्वत्र विद्यमान होते हैं। यह परिवार और स्कूल में सीखी गई बातों पर खुलकर चर्चा के केन्द्र बन जाते हैं और यहीं बालक बड़ा होते–होते अपने स्वयं के विचार बनाना सीखता है। यह वे समूह हैं जहाँ बालक में, बालक को सिखाई गई बातों को आत्मसात करने की प्रक्रिया चलती है। अपने साथियों में आदान–प्रदान की ऐसी 'गपुतगू' इनमें होती है कि व्यक्ति के विचार यहाँ पर बनते व सँवरते हैं। उसके राजनीतिक विचारों की पुख्ता नींव यही व इन्हीं समूहों द्वारा पड़ती है।[5]

(घ) जन–संपर्क के माध्यम समाचार पत्र, दूरदर्शन, रेडियो इत्यादि, विचार के निर्माण और अभिव्यक्ति के ऐसे साधन हैं जिनसे व्यक्ति अपने राजनीतिक विचारों को बनाने सँवारने और उनको प्रकट करने के उपकरण प्राप्त करर लेता है। लोकमत का निर्माण और अभिव्यक्ति इन्हीं से होती है। आजकल के युग में संचार माध्यम व्यक्ति के जीवन पर छा से गये हैं। इनका उसके राजनीतिक विचारों पर सीधा प्रभाव पड़ता है और आजकल इनके द्वारा ही व्यक्ति में विशेष प्रकार के विचारों को पनपाने का कार्य सम्पन्न होता है। यही कारण है सभी देशों में सभी प्रकार की सरकारें अपने नागरिकों के राजनीतिक अभिमुखीकरणों को इन्हीं के माध्यम से विशेष 'साँचे' में ढ़ालती हैं। उनमें परिवर्तन लाती है और इस तरह व्यक्ति

के राजनीतिक विचारों में 'मंथन' का रास्ता खोलती है। यहाँ व्यक्ति वयस्क होता है उसका बचपना पीछे छूट जाता है और उसकी राजनीतिक समझ को अपेक्षित रंग से रंगने का रास्ता खुला पड़ा होता है। जन–सम्पर्क के माध्यम अत्यधिक सीधे रास्ते से राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को गति प्रदान करते हैं। यही कारण है कि अधिकतर विकासशील देशों में संचार माध्यमों पर सरकारी नियंत्रण रखकर इनकी सहायता से राजनीतिक आधुनिकीकरण की प्रवृत्तियाँ प्रोत्साहित की जाती हैं और लोगों के दकियानूसी विचारों को झकझोरा जाता है।[6]

(ङ) सरकारों द्वारा लोगों के विशेष प्रकार के राजनीतिक आचरण की अपेक्षाएँ राजनीतिक समाजीकरण के अन्य अभिकरणों को इस उद्देश्य प्राप्ति में लगाने का रास्ता खोल देती हैं। सभी सरकारें, विशेषकर सर्वाधिकारवादी व स्वेच्छाचारी शासन तंत्र इच्छित मूल्यों का अपने नागरिकों में आरोपण करने के लिए शिक्षण–संस्थाओं और जन–सम्पर्क माध्यमों का खुलकर प्रयोग करते हैं।

(च) राजनीतिक दल दोहरे ढंग से राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण रहते हैं। एक तो यह राजनीति को व्यक्ति के घर की चौखट तक ले जाते हैं और दूसरे यह सामाजिक व्यक्ति को घसीटकर राजनीति में ले आते हैं। सत्ता प्राप्ति का लोकतंत्रों में तो माध्यम ही व्यक्ति होता है। अतः उसको राजनीति में लाये बिना राजनीतिक दलों के सत्ता में आने के मनसूबे ही मर्तरूप नहीं लेते। राजनीतिक दलों का हर प्रकार की शासन व्यवस्थाओं में सक्रिय देखा जाता है। दल की सक्रियता का उद्देश्य ही लोगों का राजनीतिक समाजीकरण करना है जिसमें दल के विचारों के अनुरूप लोगों के राजनीतिक विचार बनाये जा सकें। चुनावी राजनीति ने दलों को महत्वपूर्ण भूमिका ही नहीं दी है अपितु उन्हें शासन–तंत्र की ओर ललचाने का आमंत्रण भी दिया है। इसमें राजनीतिक व्यवस्था के लोगों का आधारभूत स्थान होता है। अतः उनके विचारों, मूल्यों व मान्यताओं को, विशेष रंग में, उस रंग में, जिस रंग का राजनीतिक दल विशेष है, राजनीतिक दल ही रंगते हैं। इस तरह, राजनीतिक दलों का राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण के रूप में महत्व दिन–प्रतिदिन बढ़ता ही जा रहा है। इनका महत्व तानाशाही व्यवस्था में भी कम नहीं रहता है। वहाँ तानाशाह के विरुद्ध लोगों को खड़ा करने के लिए उनके विचारों में बदलाव लाया जाता है जिससे वे तानाशाह के विरुद्ध संघर्ष में दल के साथ रहें।

राजनीतिक समाजीकरण के विभिन्न अभिकरणों के इस विवेचन से यह नहीं समझना है कि इनके अलावा इसके कोई और अभिकरण नहीं होते हैं। सही बात तो यह है कि अलग–अलग देशों में भिन्न–भिन्न प्रकार की परिस्थितियाँ होती

हैं और इस कारण राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों की इस सूची में कुछ और अभिकरण जुड़ जाते हैं तो कुछ इसमें से कट जाते हैं जैसे भारत में 70 प्रतिशत जनता का अशिक्षित होना और आधे बालकों का स्कूल नहीं जाना या बीच में ही स्कूल छोड़ देना इस देश के लोगों में शिक्षण संस्थाओं की राजनीतिक समाजीकरण के रूप में तो भूमिका को अत्यधिक सीमित कर देता है। विकासशील देशों में तो अजीबोगरीब परिस्थितियाँ पाई जाती है। इस कारण इन देशों में राजनीतिक समाजीकरण के इन अभिकरणों में से कुछ केवल औपचारिक ही रह जाते हैं।[7]

राजनीतिक समाजीकरण के अनेक नियामक और सीमाएँ हैं। राजनीतिक व्यवस्थाएँ, लोकतांत्रिक, सर्वाधिकारवादी या निरंकुश प्रकार की हो सकती हैं। इनमें से हर व्यवस्था में राजनीतिक समाजीकरण की सीमाएँ निर्धारित रहती हैं। लोकतंत्र में खुलापन रहता है जबकि अन्य दो व्यवस्थाएँ जकड़नों से युक्त होती हैं। अतः ऐसी व्यवस्थाओं में राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण शासन तंत्र की अपेक्षाओं के अनुसार ही सक्रिय रहने के लिए मजबूर होते हैं। इसलिए राजनीतिक व्यवस्था की प्रकृति न केवल राजनीतिक समाजीकरण की महत्वपूर्ण नियामक है अपितु यह ''छल–योजन'' या राजनीतिक ''सिद्धान्त–बोधन'' के लिए राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों को प्रयुक्त करने की नियामक भी हो जाती है।

राजनीतिक समाज के अभिमुखीकरणों से तात्पर्य है कि समाज में समाजीकरण किस दिशा में पनप रहा है। समाजीकरण और राजनीतिक समाजीकरण में दिशाई साम्य की अवस्था नहीं रहने पर राजनीतिक समाज के अभिमुखीकरण उलट सकते हैं। ऐसी अवस्था राजनीतिक समाजीकरण की नियामक ही नहीं उसके लिए घातक भी हो जाती है। ऐसा सामान्यतया उस अवस्था में ही होता है जब शासन तंत्र अप्रकट रूप से चल रही राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने लगता है। इससे तो लोकतंत्र व्यवस्थाओं तक में बचाव नहीं है तो फिर निरंकुश या जकड़ी हुई व्यवस्थाओं में इससे बचने का कोई रास्ता ही नहीं रहता।

राजनीतिक समाज, समाज के वृहत्तर दायरे में ही पृथकपन रखता है। अतः समाज के नॉर्म्स अन्ततः राजनीतिक समाज के नॉर्म्स भी बन जाते हैं। यह ही अगर गलत या समाजीकरण के अभिकरणों की भूमिका को नकारने वाले हों तो यह राजनीतिक समाजीकरण के नकारात्मक नियामक बन जाते हैं। अन्यथा सामान्य परिस्थितियों में यह उसके सकारात्मक नियामक रहता है। जन–सम्पर्क माध्यम राजनीतिक समाजीकरण के सबसे महत्वपूर्ण अभिकरण बनते जा रहे हैं। इनका अभाव लोगों के राजनीतिक विचारों व मान्यताओं के निर्मित होने का मार्ग

ही रोक देते हैं। इस शताब्दी से पहले इनके अभाव के कारण हम 18वी 19 वीं शताब्दियों में राजनीतिक समाजीकरण की कोई बात ही नहीं करते हैं। अतः संचार साधन अब बहुत ही तेजी से राजनीतिक भूमिका में लोगों को दीक्षित करने के माध्यम बनते जा रहे हैं। इनका अभाव राजनीतिक समाजीकरण का ऐसा नियामक बन जाता है जिसकी कमी की पूर्ति ही नहीं हो सकती है।[8]

राजनीतिक समाजीकरण के नियामक एक ही तरह से इसका नियमन नहीं करते हैं। यह परिस्थिति जन्य ही होते हैं अतः इनका प्रभाव घटता–बढ़ता रहता है। इनके साथ और भी कई नियामक हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, भौगोलिक गतिशीलता की स्थिति में लोग नये इलाकों में जाने के बाद राजनीतिक प्रश्नों की चर्चा करने या राजनीतिक गतिविधियों में भाग लेने के प्रति अनिच्छा रखने लग जाते हैं। अतः निष्कर्ष में यही कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाजीकरण कई प्रकार से सीमित, प्रतिबन्धित व नियमित रहते हुए ही चलने वाली प्रक्रिया है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर हम कह सकते हैं कि राजनीतिक संस्कृति के निरुपण में राजनीतिक समाजीकरण की महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। किन्तु, कई बार 'अड़ियल' प्रकार की राजनीतिक संस्कृति समाजीकरण की प्रक्रिया को शिथिल कर देते है या अवरोध ही उत्पन्न कर देती है। राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक समाजीकरण के संकल्पनात्मक रूप में विशेष अन्तर नहीं होता है। इनमें विरोधाभास भी नहीं हो सकता है। इसलिए अगर किसी राजनीतिक समाज में राजनीतिक संस्कृति ही कई दबावों से विशेष प्रकार की बन जाये तो यह राजनीतिक समाजीकरण में रोड़ा बन सकती है। ऐसी अवस्था में यह राजनीतिक समाजीकरण का नियामक बन जाती है। अन्यथा सामान्य स्थिति में राजनीतिक संस्कृति इसकी प्रेरक और प्रेरणा शक्ति ही रहती है।

अन्त में यहाँ यह उल्लेख करना आवश्यक है कि आजकल अनेक देशों में धर्म और उससे संबंधित धार्मिक संस्थाएँ राजनीतिक समाजीकरण का ऐसा असरदार अभिकरण बन गया है कि उसकी भूमिका अन्य सभी अभिकरणों के मुकाबले में अधिक निर्णायक बनती जा रही है। धर्म में विवेक से अधिक भावना व आस्था का स्थान होता है और इस आधार पर व्यक्ति के राजनीतिक विचारों, अभिवृत्तियों और उसके मूल्यों का नया निरुपण सरलता से किया जा सकता है। राजनीतिक स्वार्थों से उत्प्रेरित लोग धर्मान्धता की लहर पर राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को इस प्रकार उलट–फेर रहे हैं कि यह लोगों के राजनीतिकरण का

नया आयाम बन गया है और इससे राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया भी अछूती नहीं रही है।

सन्दर्भ सूची :

1 जैन, लबानिया एम.ए. शशि के., राजनीतिक समाजशास्त्र, रिसर्च पब्लिकेशन, नई दिल्ली, 2007, पृ. 33.

2. उपरोक्त, पृ. 36.

3. अली असरफ एवं एल.एन. शर्मा, पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यू दिल्ली, 1988, पृ. 59.

4. उपरोक्त, पृ. 60.

5. नेहा अरोड़ा, पॉलिटिकल सोसियोलॉजी, बुक इन्क्लेव, न्यू दिल्ली, 2014, पृ. 38.

6. आर.टी. जंगम, पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, ऑक्सफोर्ड एण्ड आई बी.एच. पब्लिशिंग कम्पनी, नई दिल्ली, 1987, पृ. 47.

7. धर्मवीर, राजनीतिक समाजशास्त्र, राजस्थान, हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1998, पृ. 87–89.

8. उपरोक्त.